❀ आभार-प्रदर्शन ❀



स्वर्गीय ब्र० श्री गणेशलाल जी बिलाला, जयपुर

प्रस्तुत ट्रैक्ट के प्रकाशन का व्यय भार श्री प० सन्त कुमार जी बिलाला, जयपुर ने अपने पूज्य पिताजी स्व० ब्र० श्री गणेश लालजी बिलाला की पवित्र स्मृति में अपने माताजी पूज्यमाता १०५ आर्यिका नेमिमती जी के आदेश पर, वहन किया है जिसके लिये जैन मिशन आपका अत्यन्त आभारी है।

—गुलाब चन्द्र जैन

संयोजक

जैन मिशन जयपुर केन्द्र

मारूजी का चौक, जयपुर

ॐ

दिवा-भोजन की संस्कृति एवं स्वास्थ्य के लिये महत्ता।

१. संस्कृति का मूलाधार

'कुसुमेहि वासियाण तिलाण तिल्लं पि आसइ सुयधं।
एवागमा हु भासी धम्मा वीयरागेहि ॥'

*   *   *

'कुसुम वासित तिलों से है सुगंधित स्नेह ज्यों बनता।
त्यों वीतराग वाणी से सुवासित मन धर्ममें ढलता ॥'

कुसुम इस पद्यको गुनगुनाता हुआ अपने घर से निकला तो उसने देखा पावस-पवन सुंदर सघन घनों से अठखेलियाँ करता हुआ बढ़ा जा रहा है। वह कुछ क्षणों तक एकटक उनकी ओर निहार कर निश्चिंत हो गया कि बादल उसे भिगा न देंगे। पवनके स्वरमें स्वर मिलाता हुआ वह अपने मित्र मनोज के घर की ओर चल पड़ा।

सूर्य अस्ताचल की ओर शीघ्रतासे भगा जा रहा था जिसके कारण बादलोंको एक नई आभा मिल गई थी। दोनोंमें एक होड़-सी लगी हुई थी। कुसुमको अभी एक पुरानी बातकी याद ताजी हो आई। उसे 'दिनकर' जी के शब्द स्मरण हो उठे—उन्होंने 'संस्कृतिके चार अध्याय' (पृ० ७४) में लिखा है कि 'जब (वैदिक) आर्य यहाँ आये, उसके पहले ही सभ्यता का विकास यहाँ हो चुका था और धर्म तथा संस्कृति के अनेक अंग रूप ग्रहण कर चुके थे।' कुसुम सोचने लगा कि वैदिक आर्यों के पहले भारत में ये कौन लोग थे जिन्होंने भारतीय धर्म और संस्कृति को जन्म दिया था? उसने

विचारा तो उसे लगा कि ब्राह्मणोंके अतिरिक्त भारतमें श्रमण भी रहते थे, जिनमें निर्ग्रन्थ(जैन)प्रमुख और प्राचीन थे। जैन परम्परा मे ऋषभदेव धर्म और संस्कृति के आदि स्रष्टा कहे गये हैं। इसी कारण उनकी मान्यता सारे संसारमें हुई थी।[1] डॉ॰ जिम्मर जैसे विद्वानों ने इसी विशेषता के कारण जनधर्म को प्राक् ऐतिहासिक काल का अर्थात् वदिक आर्यों के आगमनसे पहले का धर्म प्रगट किया है।[2] 'दिनकर' जी लिखते हैं कि 'यह उतना ही पुराना है जितना कि वैदिक धर्म।' उस प्राचीनकालमें इन दोनो मतों में संस्कृतिके आदान प्रदान की होड लगी थी। बादलों की होड को देखकर कुसुम को इसका स्मरण हो आया था।

वह सोचता ही गया। पावसमन्थरा की ठंडी हिलोर मानो उसकी स्मृतिको ताजी करने पर तुली हुई थी। उसका मन ज्ञान-लोकमें पवन से भी तीव्र और ज्योतिगति से दौड़ा जा रहा था। पलक मारते ही वह भोग भूमिके कालमें पहुँच गया-तब पाषाण मई संस्कृति का युग था-पृथ्वीमें इतनी चमक थी कि उसके आगे सूर्य और चन्द्रके प्रकाश फीके हो रहे थे। कुसुमने ज्ञानपटलमें देखा कि प्रकाश का धवल आलोक पृथ्वी पर व्याप्त है, जिसकी भूमि धानकी हरियाली से पन्ना सी दमक रही है। उसपर शेर चीते और गाय भैंस साथ साथ प्रेम पूर्वक धाम चर रहे हैं। प्रेमका यह अद्भुत दृश्य देखकर कुसुम रोमांचित हो गया। उसने आगे दृष्टि दौड़ाई तो देखा सुन्दर कल्पवृक्षों की शीतल छायामें युवक युवती का युगल आनन्द भोग भाग रहा है। उनको घरगृहस्थी की चिन्ता नहीं है। वे दिनरातकी सीमामें बंधे नहीं है और भूखकी बाधा उनको सता नहीं पाती-झरबेरी का बेर अथवा बहुत भूख हुई तो बडा बेर खाकर ही वे मस्ती का आनन्द लूटते हैं। दिवा या रात्रि भोजन की समस्या ही तब न थी।

1 विशेषके लिए हमारी पुस्तक 'आदि तीर्थङ्कर भ॰ ऋषभदेव' देखिए।
2 Philosophies of India, p 217

राजमार्ग पर भागे जाते हुए मोटरकारके हॉर्नकी आवाज ने कुसुम के ध्यान को भंग किया–उसने मुंह उठाकर देखा तो वह मकान के द्वार पर खड़ा था। 'मनोज! मनोज!!' की आवाज लगाता हुआ कुसुम अन्दर घुसा तो मनोज का भारी स्वर उसका स्वागत कर रहा था– कौन? कुसुम भाई? आइये!' और कुसुम उसके सामने जा खड़ा हुआ! उसने मनोज को बिजली की रोशनी में भोजन की थालीसे उलझा हुआ देखकर कहा–'मनोज भइया! तुमको तो भोग भूमिमें जन्म लेना था, जिसमें रात और दिन का भेद ही नहीं होता!'

मनोज कुसुमकी तानाकशीका आदी होगया था-हँसते हुए बोला, मेरे लिए तो यही भोग भूमि है–उससे इसमें अधिक और क्या आनंद होगा? मनोज अपनी बात पूरी भी न कर पाया था कि बिजली के बल्वसे टकराकर दो बड़े से पतंग भर्राते हुए उसकी थाली पर आ गिरे। यह देखकर मनोज परेशान ही नहीं हुआ, बल्कि झेंपा भी। कुसुमने मीठा चुटकी लेते हुआ कहा–'भोग भूमि में यह परेशानी नहीं है–वहां सदाकाल दिवा भोजन ही समझिये, जो देवों का भोजन है। भोगभूमिमें निशाचरो का भोजन नहीं होता।

मनोजने यह सुना तो मुस्करा कर बोला–'तो भाई, यह उपाय बताओ जिससे भोगभूमि मिले!'

'किन्तु तुम्हें उपाय बताने से क्या लाभ?'–कुसुमने कहा! मनोज उसका मतलब तो समझा परन्तु कुसुम को उकसाने के लिए बोला– नहीं, नहीं, तुम तो मेरे बड़े भाई हो। तुम्हारी बात तो जरूर सुनूंगा!

'सुनोगे तो सही यह मैं मानता हूं, पर मानोगे नहीं!'–उसने कहा! मनोज ने भौंहें तानते हुये कहा–'ऐसी बात तो नहीं कि मानने योग्य बातको न मानूं!'

'यदि ऐसी बात है तो अहिंसा संस्कृतिके कायल बनो!–कुसुम ने छूटते ही कहा। मनोज ने चटसे उत्तर दिया–'मैं यही नहीं

जानना कि अहिंसा संस्कृति क्या क्या है ?"

'नहीं जानते तो भी समझो -यह कहकर कुसुम उसे अहिंसा संस्कृति की रूपरेखा बताने के लिए कहने लगा कि 'जब भोग भूमि का अन्त समाप्त हुआ-कल्पवृक्षकाल के वृक्षोंकी सम्पदा मिट गई-सूर्य और चांद चमक उठे, जिनसे दिन और रातका भेद उत्पन्न हुआ, तो मानव घबड़ा उठा। जलते हुए समयकी पटकी ज्वाला ने भी घबराया। मानव को समझ नहीं आ रहा था कि वह क्या करे? क्या खाय? और कब खाये? ऐसे विषम समय में प्रथम तीर्थंकर भ० ऋषभदेव प्रकट हुए थे। उन्होंने मानवको सभ्यता का पाठ पढ़ाया। उसने पहली ज्वाला को उन्होंने ईखको उगाकर उसके मीठे रसका सेवन किया था। इसीलिए वह 'इक्ष्वाकु' कहलाए थे। उन्होंने ही कृषि विज्ञानका आविष्कार करके सबके मानवकी खाद्य समस्या को हल किया था। सबके मनवको उन्होंने खेती करने खाना खाने और उठने बैठने का ढंग सिखाया था। प्राकृतिक जल और आहार पर मानवको निर्भर रहने की कला सिखाई थी। दिनमें एकबार अन्न फल और शाकका आहार करके और शुद्ध छना हुआ जल पीकर मानव सुखी रह सकता है, क्योंकि प्रकृति सुलभ वस्तुओं पर आधारित जीवन में निराकुलता होती है और स्वास्थ्य श्रेष्ठ रहता है। इसप्रकार संस्कृति की मूलाधार अहिंसा प्रधान मानव सभ्यता ही प्रारम्भमें रही था। भ० ऋषभने मानवको सिखाया कि वह मिलकर रहे पारस्परिक सहयोगसे अन्न उगाये और दिनमें एकबार भोजन करके रातको सुखकी नींद सोये। दिनमें श्रम करे और दिनमें ही खाये-रात में प्रकृति भी अलसाती है अतः मानव भी विश्राम करे। इसप्रकार, प्रिय मनोज हम मानवों का आदि संस्कृति का मूलाधार शाकाहार, दिवाभोजन और पारस्परिक सहयोग था। यही अहिंसा संस्कृति की सामान्य रूपरेखा है।'

मनोजने यह सुना तो, पर उसे संतोष न हुआ। वह बोला-

यह तो जैनों की मान्यता है।" कुसुमने उत्तर दिया-'अवश्य यह जैनोंकी मान्यता है, किन्तु इसका समर्थन प्रबल प्रमाणों से होता है। सारे विश्वके सभी प्रमुख धर्म आदिकालको अहिंसाका प्रेमयुग ही बताते हैं। सात आठ हजार वर्ष पुराने शिलालेख भी यही बताते है।'•

यदि ऐसा है तो भारतमें आमतौर पर रातमें खाने का रिवाज क्यों हो गया? मनोज ने पूछा। इसपर कुसुमने उसका समाधान किया कि 'विदेशसे जब आसुरी वृत्ति भारतमे घुस आई तब अहिंसा संस्कृति को बडा आघात पहुँचा और मांस मद्यादि अभक्ष्य भक्षण एवं रात्रि भोजन की बुराई चल पडी। अन्यथा वैदिक धर्मावलम्बी भी शाकाहारी दिवाभोजी थे-भारतकी संस्कृति ही दिवाभोजन और शाकाहार पर आधारित थी। उनके 'यजुर्वेद आह्निक' (श्लोक २४) मे स्पष्ट लिखा है कि --

"देवैस्तु भुक्तं पूर्वाह्णे, मध्याह्ने ऋषिभिस्तथा।
अपराह्णे च पितृभिः, सायाह्ने दैत्य दानवैः ॥"

अर्थ-देवोंका भोजन प्रातः होता है (इसीलिए प्रातः देव पूजा का विधान है), ऋषिगण मध्यान्हकाल मे भोजन करते हैं। तीसरे पहर पितृजनोंके भोजन करने की वेला है। सायकालमें दैत्य दानव तुल्य मानव ही भोजन करते हैं।

'अरे! इसमें तो शामके भोजन का भी निषेध है।'-मनोजने आश्चर्य से कहा। इसपर कुसुमने मुस्करा कर बताया-'भइया! पहले का भारत आदर्श भारत था-सभी सात्विक जीवन बिताते थे। इसी 'यजुर्वेद आन्हिक' (श्लोक १९) में रातके भोजन को अभोजन ही कहा है। देखो -

'सन्ध्यायां यक्षरक्षाभिः, सदा भुक्तं कुलोद्वह!
सर्व वेला मतिक्रम्य, रात्रौ भुक्तम भोजनम् ॥'

• हमारी 'आदि तीर्थङ्कर भ० ऋषभदेव' पुस्तक पढ़िये।

सर्य-'हे मुग्धोदह राजा! सध्याकालमें यश और राक्षस मद्रा मानवों ने ही सदा भोजन किया है। किंतु (दिन को) सभी वेलाओं का उल्लंघन करके रात्रिका भोजन करना तो अभोजन है।'

'बोलो, मनोज भइया, अब बुद्ध समझ में आई भारत की अहिंसा संस्कृति और दिवाभोजन का पुराना नियम ?'-कुसुमने पूछा मनोज से। मनोज इनकार तो न कर सका, परंतु अपनी आदत से लिए लाचार था। बोला-'आपका कहना ठीक जचता है।' कुसुम मनोजकी असमर्थता पर हँस पड़ा और बोला-'ठीक तो यह है ही भाई! और भी सुनो, भारत मे जो अनेक विदेशी यात्री आये, उन्होंने भी भारतीयों के शाकाहार और संयम की प्रशंसा लिखी है। सम्राट् चन्द्रगुप्त के दरबार मे यूनान का राजदूत मेगस्थनीज रहा था। उसने भी भारतीयों की भोजन व्यवस्था का प्रशंसात्मक उल्लेख किया है। उस समय भारतीय एकान्त में स्वच्छता से शाकाहार का भोजन करते थे। रात भोजन का जिक कहीं भी नहीं है। अलबत्ता सामूहिक ज्योनारों मे समय की पाबंदी नहीं रह पाती थी। देखा मनोज! यहाँ की संस्कृति मे दिवाभोजन का कितना महत्त्व था ?'

कुसुम की बात पूरी भी न हो पाई थी कि पड़ोस की एक स्त्री अपने रोते चिल्लाते हुये बालकको लेकर आई और घबड़ाई हुई बोली-'बाबूजी हाय, अब क्या करूं ? मेरे ललुआ को बचाओ!' सबने उसको ढाढस बधाते हुए पूछा-'तेरे ललुआ को हुआ क्या है ?' बड़ी कठिनाई से उसने बताया कि 'सिराहने रक्खे हुये पानी को उसने ललुआ को जो पिलाया तो उसमें पड़े हुए बिच्छूने उसके गले मे कई डंक मार दिये हैं, जिसके कारण यह परेशान है। पड़ोसिन को अस्पताल भिजवा दिया गया। वह तो गई, परंतु उस दुर्घटनाका प्रभाव सभीके दिलो पर पड़ा।'

कुसुमने बताया कि 'समाचार पत्रोंमें इसप्रकार की दुर्घटनाओं के समाचार अक्सर छपते रहते हैं। एकबार का समाचार था कि

जब रात्रिभोजन के लिए कढावमे साग चूल्हे पर चढ़ा हुआ था, तो उनमे छप्पर से एक छोटा-सा साप गिरकर पक गया और उस सागके खान से कई आदमी अपने अमूल्य प्राणों से हाथ धो बैठे। इसीप्रकार एक दूसरा समाचार था कि रातको जब कोई स्त्री दूधको दही के लिए जमा रही थी, तब बसे ही उसमे भी सापका बच्चा गिर गया। जब प्रात वह उसे बिलोने बैठी तो उसे इस दुर्घटना का पता चला। अलीगज म एक बार एक हलवाई के दूधमे छिपकली पड गई जिसे उसने निकालकर फेंक दिया और उस विषले दूध की रवडी बनाकर बेचन लगा। रातके खान के साथ खाने के लिए वही रवडी एक कहार ले गया और खाते ही मर गया। ऐसी अनेक घटनायें मिलती हैं। असलमे बात यह है कि सूय अस्त हो जाने पर रातके समय बहुतसे पशु पक्षी और पतगे बाहर निकलते हैं, जिनके कारण भोजन के दूषित होने का डर रहता है। इसीलिए भारतीय सस्कृति म दिवाभोजन का प्रचलन रहा है, जिससे रातमे भोजन बनानेका प्रसग उपस्थित नही होता। महिलाओं को भी सुविधा रहती है और स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है।'

मनोज का मन यह सब कुछ देख सुनकर भयभीत हो रहा था। उसने कुसुम से कहा-'भाई अब मैं भी कम से कम वर्षाऋतु के चार महीना मे रातको भोजन नही किया करूगा और न रातको भोजन बनाने दूगा।'

'हां, हां, जितना आत्मबल और श्रद्धा हो उतना ही त्याग और व्रत ठीकसे पाला जा सकता है। आज चौमासाका नियम लिया है तो किसी दिन दिवाभोजन की महत्ता दिल पर ऐसी चढेगी कि जीवन भरके लिए नियम ले लोगे'-कुसुमने कहा और इसके साथ ही वह मनोजसे विदा होकर अपने घर चला आया। आकाश में घिरे हुये बादलो से नन्हीं-नन्ही बूदोंने बरसकर मानो कुसुम के सद्‌प्रयास पर अपना हर्ष हो प्रगट किया।

२. धर्मग्रन्थों के आलोक में।

'अत्थं गयम्मि आइच्चे, पुरत्था अ अणुग्गए ।
आहार मइयं सव्वं मणसावि ण पत्थए ॥'

कुसुम घर की देहली पर खड़ा हुआ सूर्य को अस्ताचल की ओर जाते हुये देख रहा था, तो उसे उपर्युक्त आगम वाक्य याद आ गया। आदित्य जब अस्त हो गये तो अन्धकार आएगा ही फिर आहार कैसा? रात के समय में तो मन में भी भोजन की इच्छा नहीं करना चाहिये। खाने की बात तो दूर रही! इसी समय मनोज उसके सामने आ खड़ा हुआ। कुसुम ने चकित होकर पूछा-'आज तो आप जल्दी ही जल्दी घर से निकल पड़े?'

उत्तर में मनोज ने कहा- हाँ, निकलना क्यों नहीं? अब तो दिन में ही खा लेता हूँ जिससे घूमने फिरने और मित्रों से मिलने की आजादी रहती है।

'यह तो सुविधा है ही और साथ में सुख भी! उधर ऑफिस में भी फुरती से काम करने का ध्यान रहना होगा। हाथ और मन दोनों ही एक दूसरे से होड़ करने लगते होंगे?'-कुसुमने पूछा।

'हाँ, यह बात भी है। दिनमें भोजन करने की पाबंदी हो जाने से समयका ठीक उपयोग हो रहा है-आलस और गपशप में समय नष्ट नहीं होता। ऑफिसका काम समय पर समाप्त करके आनन्द से घर चले आते हैं।'-मनोज ने कहा।

'अब तो भाई तुम्हारे आदर्श से उन युवकों को शिक्षा लेना चाहिये जो ऑफिस या दुकानदारी का बहाना लेकर रातमें भोजन करते हैं।'-'असल बात तो यह है कि जिसके हृदय में धर्मवासना जग जाती है वह अपना मार्ग निकाल ही लेता है।'-मनोजने कहा। इसपर कुसुमने उसकी बात बड़ी करते हुये बताया-'अरे भाई! अपनी समाजमें ऐसे धर्मनिष्ठ भाई अब भी मौजूद हैं जो वित्तमत्रो

वे पद पर आरूढ़ होकर राजकाज करते हुए भी प्रातः पूजा करते और दिनमें भोजन कर लेते हैं। धर्मभाव का बड़ा महात्म्य है।' कुछ सोचकर मनोजने पूछा–'तो लोगों में यह धर्मभाव जगता क्यों नहीं ?' कुसुमने उत्तर दिया–'धर्मभाव तब जगे जब अच्छे संस्कार हों, अच्छी संगति हो और स्वाध्याय की रुचि हो।'

यह आपने ठीक कहा'–मनोज बोला और फिर सिर खुजला कर कहने लगा–'स्वाध्याय तो मैं भी नहीं करता।' कुसुम ने प्रेरणा की–'तो करने लगो। फिर रात्रि भोजन त्याग का महत्व अच्छी तरह समझ लोगे।' इसपर मनोजने कहा–'स्वाध्याय तो करूंगा किन्तु अभी आप शास्त्रों के आधारसे रात्रभोजन त्यागका महत्व बताइए।' कुसुम तो समाधान करने के लिए उत्सुक ही था। झटसे बोला–लो सुनो। पहले ही वसुनंदि, श्रावकाचार की बात कहते हैं –

'एयादसेसु पढमं वि जदो णिसिभोयणं कुणंतस्स ।
ठाणं ण ठाइ तम्हा णिसिभुत्तं परिहरे णियमा ॥३१४॥
चम्मट्ठि कीड उंदुर भुयंग केसाइ असणमज्झम्मि ।
पडियं ण किं पि पस्सइ भुंजइ सव्वं पि णिसि समए ॥३१५॥
एवं बहुप्पयारं दोसं णिसि भोयणम्मि णाऊण ।
तिविहेण रायभुत्ती परिहरियव्वा हवे तम्हा ॥३१८॥'

भावार्थ–'यदि कोई रात्रिभोजन करता है, तो वह श्रावक की ग्यारह प्रतिमाओं में से पहली प्रतिमा का भी श्रावक नहीं रहता। इस कारण रात्रिभोजन का नियमसे त्याग करना चाहिये।'

'रात्रिके समय, चमड़ा, हड्डी, कीड़ा, मूषक, सांप और बाल आदिक जो कुछ भी भोजन में पड़ जाता है वह दिखाई नहीं देता, और सब कुछ खा लिया जाता है।'

'इसप्रकार रात्रिभोजन में बहुत से दोष जानकर मन, वचन, कायसे रात्रिभोजन का त्याग करना चाहिये।'

'सुभाषित रत्न संदोह' में श्री अमितगति आचार्य ने लिखा है –

'हिंसयन्ते प्राणिन सूक्ष्मा यत्रागुच्यमिमद्यते ।
तद्रात्रिभोजन सतो न कुर्वन्ति दयापरा ॥७६६॥'

भावार्थ–'जिसमें असख्य सूक्ष्म जीवोकी हिंसा होती है, जिसके कारण अपवित्रता आती है ऐसा रात्रिभोजन दयालु सज्जनों को नहीं करना चाहिये।'

श्री रविषेणाचार्यने 'पद्मपुराण' (१४ वां पर्व) मे लिखा है कि "बुद्धिमान पुरुष सदा नियम पालने का प्रयत्न करते हैं–जो बहुत न बने तो अल्प ही नियम करना उचित है–नियम बिना नही रहना। जैसे मेघ की तो एक एक बूंद ही बरसती हैं, परन्तु उन सब बूंदोंके मिलने से महानदी मे ऐसा प्रवाह आता है कि वह समुद्र से जा मिलती है, वैसे ही जो पुरुष दिनमे भी एक मुहूर्त मात्रके लिए ही आहार त्याग करते हैं उनको एक मासके उपवास का फल मिलता है। और जो प्राणी रात्रिभोजन का त्याग करते हैं और जबतक नही लेते हैं उनके प्रति पुण्यका सचय होता है। रात्रिका भोजन महा अधर्म है–कठोरचित्त पापात्माओं ने ही उसमे धर्मकी कल्पना की है, जो दिनमे अशन त्याग कर रातका भोजन करते हैं ऐसे लोगो को प्रतिबोधना भी कठिन है। किन्तु धर्मात्मा को सदा सोचना चाहिये कि जब सूर्य अस्त होता है तब जीव जन्तु दृष्टि नही पडते हैं; फिर भोजन कैसे करें? जो अविवेकी पुरुष रात्रिको भोजन करते हैं सो मक्षिका, कीट, केशादि का भक्षण करते हैं–वे डाकनि, राक्षस, स्वान, मार्जार, मूसा आदि मलिन जीवों का उच्छिष्ट आहार ग्रहण करते है। बहुत क्या कहें, सच तो यह है कि जो व्यक्ति रात्रिभोजन करता है सो सब अशुचि का भोजन करता है। सूर्यके अस्त होने पर कुछ भी तो दृष्टि नही पडता, इसलिए जब दो मुहूर्त (लगभग २ घण्टे) दिन बाकी रहे तबसे लेकर प्रात दो मुहूर्त दिन चढे तक विवेकियो को चारो प्रकारके आहार का त्याग करना चाहिये अर्थात् अशन, पान, खाद, स्वाद्य का त्याग करना चाहिये। जो रात्रिभोजन करते हैं

वे मनुष्य नही पशु हैं। जो जिन शासनसे विमुख होकर व्रत नियम से रहित रातदिन खाते-पीते ही रहते हैं वे परलोक मे कैसे सुखी होंगे? मास, मद्य मधु, निशिभोजन, चोरी और परनारी जो सेवन करते हैं व दोनो जन्म खो देते हैं। जो रात्रिभोजन करते हैं वे अल्पआयु, हीन, व्याधि पीडित, सुखरहित महा दुखी होते हैं। रात्रिभोजन के पापसे वे बहुतकाल तक जन्म-मरण मे दुख उठाते हैं। रात्रिभोजी अनाचारी शूकर कूकर, गरदभ, मार्जार, काग व नर्कनिगोद त्रसस्थावर आदि अनेक कुयोनिया के दुख उठाते हैं। वे रात्रिभोजी निशाचर अर्थात् राक्षसके समान हैं। और जो भव्य जीव जिनधर्म को पाकर नियम धारण करते हैं वे समस्त पापोको भस्मकर मोक्षपद पाते हैं। अत अणुव्रतों में परायण रत्नत्रयके धारक श्रावकों (गृहस्थों) को चाहिए कि वे दिनमे दोषरहित भोजन करें। ऐसे दयावान रात्रिभोजन न करने के कारण स्वर्गो के सुख भोगकर इस पृथ्वी पर चक्रवर्ती के पदको पाते हैं। देवेन्द्र, असुरेन्द्र, और नरेन्द्र दिवाभोजन के पुण्यसे होते हैं। सूर्य समान प्रतापी, चन्द्रमा समान सौम्य, अविकल प्रतापी, देवतुल्य भोगो के भोक्ता वे ही पुरुष होते हैं जो सूर्य अस्त होने के पश्चात् भोजन नही करते हैं, इत्यादि।"

'पुरुषार्थ सिद्धयुपाय' में भी लिखा है कि जो अहिंसावादी है उनको रात्रिभोजन नही करना चाहिए, क्योकि उसमे हिंसा होती है। यथा –

'रात्रौ भुञ्जाना नाना यस्माद निवारिता भवति हिंसा।
हिंसा विरतैस्तस्मात्त्यक्तव्या रात्रिभुक्तिरपि ॥१२९॥'

स्वामि कार्तिकेय कहते हैं कि जो रात्रिमे भोजन नही करता, उसे एक वर्ष में छ महीने के उपवास का फल मिल जाता है —

'जो णिसि भुत्ति वज्जदि सो उपवास करेदि छम्मास।
सवच्छरस्स मध्ये आरम्भ मुयदि रयणीये ॥'

—स्वामि कार्तिकेयानुप्रेक्षा श्लो ३८३

श्वेताम्बर जैन समाजमें रात्रिभोजन त्याग का इतना महत्व है कि उसे छठा महाव्रत कहा गया है, यथा —

'चतुर्विधस्याऽऽहारस्य, सर्वथा परिवर्जनम् ।
षष्ठं व्रतमिहैतानि, जिनैर्मूलगुणाः स्मृता ॥'

रात्रिभोजनमें प्राणातिपात आदि अनेक दोष सभव जानकर ही उसके त्यागका उपदेश मूलगुण रूपमें दिया गया है। स्पष्ट विधान है कि इसप्रकारके दोषोको देखकर ज्ञातपुत्र भ० महावीरने निर्ग्रन्थ(जैनो)को रात्रिभोजन नही करनेका उपदेश दिया था यथा-

'एवं च दोसं दट्ठूण, नायपुत्तेण भासियं ।।
सव्वाहारं न भुंजति, निग्गंथा राइभोयणं ॥'

श्री हेमचन्द्राचार्य ने 'योगशास्त्र' (प्र० ३) मे लिखा —

'वासरे च रजन्यां च, यः खादन्नेव तिष्ठति ।
शृङ्गपुच्छ परिभ्रष्टः स्पष्टं पशुरेव हि ॥'

अर्थात्-जो मनुष्य दिन रात खाता ही रहता है वह सींग और पूछके बिना पशु ही है। वह विचार शक्ति से काम नही लेता है।

निम्नलिखित श्लोकों मे आचार्य जी ने अनेक दोषों के कारण निशिभोजन को निषिद्ध ठहराया है —

'मेधां पिपीलिका हन्ति, यूका कुर्याज्जलोदरम् ।
कुरुते मक्षिका वान्तिं, कुष्ठरोगं च कोलिकः ॥५०॥'

अर्थात्-रात्रिभोजन के करते समय कीडी खाली जाय तो बुद्धिका नाश होता है, जू भक्षणसे जलोदर होता है, मक्खी से वमन होती है और कालिक के जाने से कुष्ट रोग हो जाता है।

'कण्टको दारुखण्डं च, वितनोति गलव्यथाम् ।
व्यञ्जनान्तर्निपतितस्तालु, विध्यति वृश्चिकः ॥५१॥'

अर्थात्-रात्रिभोजनमें कदाचित् काटा, लकडी का टुकडा आदि खा लिया जाय तो गलेमें व्यथा उत्पन्न करता है। शाकादि के अंदर बिच्छू आ जाय तो वह तालू को वेध देता है।

'विलग्नस्तु गले बाल' स्वरभंगाय जायते ।
इत्यादयो दृष्टदोषा:, सर्वेषां निशि भोजने ॥५२॥'

अर्थात् रात्रिभोजन के मध्य बाल आ जाय तो स्वरभंग हो जाता है। इसप्रकार अनेक दोष रात्रिभोजन करने से सभी को होते हैं, यह प्रत्यक्ष देखा गया है।

अह्नो मुखेऽवसाने च, यो द्वे द्वे घटिके त्यजन् ।
निशाभोजनदोषज्ञोऽश्नात्यसौ पुण्यभाजनम् ॥६३॥

अर्थात्-रात्रिभोजनके दोषोंको जानकर जो मनुष्य दिवसके आदि और अन्तके दो घड़ी छोड़कर दिवाभोजन करता है, वह पुण्यका भाजन होता है।

'करोति विरति धन्यो य: सदा निशिभोजनात् ।
सोऽर्धं पुरुषायुष्य, स्यादवश्यमुपोषित ॥६६॥'

अर्थात्-धन्य है वह भाग्यशाली पुरुष जो हमेशा रात्रिभोजनसे विरत रहता है-रातको नहीं खाता है। निस्सन्देह वह अपनी आयुके अर्धभाग पर्यन्त तुल्य उपवासों का महाफल पाता है।

इसप्रकार देखा भाई मनोज ! जैनशास्त्रोंमें पद पद पर रात्रिभोजनका निषेध करके उसे महान् पाप कहा गया है। रातको भोजन नहीं करना और छानकर पानी पीना जैन गृहस्थों की प्रमुख चर्या रही है।

यह आप ठीक कहते हैं।' मनोजने कहा और फिर पूछा कि जैनेतर शास्त्रोंमें इस विषयमें क्या विधान है?

इस प्रश्नके उत्तरमें कुसुमने निम्नलिखित प्रमाण हिन्दू शास्त्रों से उपस्थित करके बताया कि उनमें भी रात्रिभोजन का निषेध किया गया है —

'योगवाशिष्ट' (पूर्वार्द्ध श्लो० १०८) में लिखा —

'नक्तं न भोजयेद्यस्तु, चातुर्मास्ये विशेषत ।
सर्वं कामानवाप्नोतु, इहलोके परत्र च ॥'

अर्थ-जो मनुष्य रात्रिभोजन नहीं करता है खासकर चतुर्मास

में रात्रिभोजन का त्याग कर देता है, वह इस भव और परभव में सर्व मनोरथ को प्राप्त करता है।

'महाभारत' (शांतिपर्व) मे भी लिखा —

'चत्वारि नर्क द्वार, प्रथम रात्रिभोजनम् ।
पर स्त्रीगमन चैव, सन्धानानन्तकायकम् ॥१५॥
ये रात्रौ सर्वदाऽऽहार, वर्जयन्ति सुमेधस ।
तेषां पक्षोपवासस्य, फल मासेन जायते ॥१६॥'

अर्थ-चार कार्य नर्कके द्वार रूप हैं, जिनमे सबसे पहला रात्रि-भोजन है। दूसरा परस्त्री सेवन, तीसरा अचार खाना और अनन्त काय अर्थात् कदमूल खाना है। इसलिए जो सुबुद्धि वाले मनुष्य सर्वदा रात्रिभोजन का त्याग करते हैं वे एक महीने मे एक पक्षके उपवास का फल प्राप्त करते हैं।

'महाभारत' (ज्ञान पर्व अ० ७०) के निम्नलिखित श्लोक से स्पष्ट है कि रात्रिभोजन करने वाले मनुष्य की आत्मा को उल्लू, कउआ, बिलाउ, गिद्ध, साबर, सूअर, साप, बिच्छू आदि अनेक नीच योनियो म जन्म लेना पड़ता है —

'उलूक काक मार्जार गृध्रशम्बर शूकरा ।
अहि वृश्चिक गोधाश्च जायन्ते रात्रिभोजनात् ॥२०३॥'

इसीप्रकार मार्कण्ड ऋषि ने 'मार्कण्डेयपुराण' (अ० ३ मे लिखा है —

'मृते स्वजनमात्रेऽपि सूतक जायते किल ।
अस्तंगते दिवानाथे भोजन क्रियते कथम् ? ॥३६॥'

अर्थात्-स्वजन के मरण से जब सूतक लगता है, तो दिवसके स्वामी सूर्यके अस्त होने पर कैसे भोजन किया जा सकता है ? अर्थात् नही किया जा सकता है।

इसी पुराण के अ० ३४ मे निम्न० श्लोक है —

'अस्तंगते दिवानाथे आपो रुधिरमुच्यते ।
अन्न मांससम प्रोक्त मार्कण्डेन महर्षिणा ॥५३॥

अर्थात्- सूर्य अस्त होनेके पश्चात् पानी रुधिर समान कहलाता है और अन्न मासके समान गिना जाता है, ऐसा मार्कण्ड नामक ऋषिने कहा है अतः रात्रिमें खाना पीना उचित नहीं है।

मार्कण्ड ऋषि तो युधिष्ठिरसे कहते हैं कि तपस्वी और विवेकी गृहस्थों को पानी तक रात्रिमें नहीं पीना चाहिये। भोजन तो दूर की चीज रही। यथा –

'नोदकमपि पातव्यं रात्रावत्र युधिष्ठिर ।
तपस्विना विशेषेण गृहिणां च विवेकिनाम् ॥२२॥'

—*मार्कण्डेयपुराण अ० ३०*

इसी प्रकार 'स्कन्धपुराण' (स्कन्ध ७ अ० ११) में दिवाभोजन की महिमा में कहा गया है —

'एकभक्ताशनान्नित्यमग्नि होत्र फलं लभेत् ।
अनस्तभोजनो नित्यं तीर्थयात्रा फलं भजेत् ॥२३॥

अर्थात्–जो मनुष्य केवल एकबार भोजन करता है वह अग्नि होत्र के फलको पाता है और जो हमेशा सूर्यास्त से पहले भोजन कर लेता है उसे तीर्थयात्रा का फल मिलता है।

हिन्दू 'पद्मपुराण' में तो यहां तक कहा गया है कि जो रात्रि-भोजन करता है व मांसादि खाता है उसका तीर्थयात्रा करना और तप तपना सभी व्यर्थ है –

'मद्यमांसाशनं रात्रौ भोजनं कंद भक्षणं ।
ये कुर्वन्ति वृथातेषां तीर्थ यात्रा जपस्तपः ॥'

इसीप्रकार 'मनुस्मृति' आदि और भी कई हिंदूग्रन्थों में दिवा-भोजन करने का उपदेश दिया गया है। फिर मनोज भइया, स्वास्थ्य की दृष्टिसे भी रात्रिभोजन त्याग का महत्व है।'

'अच्छा, क्या आयुर्वेद शास्त्र में भी कुछ लिखा है ?'–मनोज ने पूछा। उत्तर में कुसुमने बताया–हाँ, आयुर्वेद (माध्यन्दिनी शाखा) में लिखा है कि 'सूर्य अस्त होने पर मनुष्यका हृदय कमल और नाभिकमल सकोच को प्राप्त होते हैं अर्थात् बंद हो जाते हैं,

इसलिए तथा सूक्ष्म जीव भोजन के साथ खाए जा सकते हैं इस लिए रात्रिभोजन नहीं करना चाहिये —

'हृन्नाभिपद्म सङ्कोचश्चण्ड रोचिर पायत ।
अतो नक्तं न भोक्तव्य सूक्ष्मजीवानादपि ॥१२६॥'

चरकके आयुर्वेदसूत्र ग्रन्थके आठवें अध्याय में भी रात्रिको भोजन करना अनुचित बताया है उसके उर्दू तरजुमे में लिखा है —

"रातको न खाये, खाना खाने के बाद न खाये।" (पृ० ८६)

इसीप्रकार सुश्रुत के आयुर्वेद मे लिखा है कि —

'जिन मौसमों में रात बडी होती है (यानी हेमन्त और शिशिर ऋतुओं में) इनमें सुबह के वक्त ही भोजन करना चाहिए। और जिन ऋतुओं में दिन बडे होन हैं (यानी ग्रीष्म, बसन्त वगैरह) इनमें सुगन्ध मधुर भोजन तीसरे पहर से पीछे करना चाहिये। और जिन ऋतुओं में दिन और रात बराबर होते हैं (यानी शरद और बसन्त वगैरह) उनमें दोनों का बराबर हिस्सा करके दरम्यान में खाना चाहिये।" (उर्दू तर्जुमा, पृ० ४०० ४०१)

इससे भी दिवाभोजन की ही पुष्टि होती है।

इसप्रकार कुसुमके मुखसे धर्मशास्त्रों मे रात्रिभोजन त्याग का विधान और दिवाभोजन की महत्ता को सुनकर मनोज बहुत ही प्रभावित हुआ। वह अपने मित्रके ज्ञानकी सराहना करता हुआ उनसे विदा लेकर अपने घर को गया।



३. तर्क और विज्ञानके प्रकाश में।

कुसुम अपने स्टडीरूममें बैठा हुआ, स्वामी शिवानन्द की पुस्तक 'हैल्थ एण्ड डाइट' पढ़ रहा था कि उसी समय मनोज भी वहीं आ पहुँचा। अब उसमें एक नई चेतना आ गई थी। कुसुमने उसके आगे स्वामी शिवानन्द जी की उक्त पुस्तक सरकाते हुए पृ० २६० को खोलकर उनके समक्ष रख दिया। मनोज पढ़ने लगा —

"The evening meal should be light and eaten very early If possible take milk and fruits only before 7 p m No solid or liquid should be taken after sunset"

—*Swami Shivananda* (Health & Diet p 260)

फिर वह बोला-'स्वामी शिवानन्द जी तो वैदिकधर्म के एक विश्वविख्यात् महात्मा हैं। आप जीते भी उद्भट विद्वान् हैं। उनका लिखना ठीक ही है कि हमें सायंकाल का भोजन सूर्यास्त से जल्दी कर लेना चाहिए और सूर्यास्तके पश्चात् कोई भी ठोस या तरल खाद्य नहीं लेना चाहिये।'

कुसुमने उसकी बातको पुष्ट करते हुये कहा-'स्वामी शिवानन्द का मत प्राचीन भारतीय जीवन की दैनिक चर्या का प्रतिबिम्ब है। हमारे युवक यदि बुद्धि पूर्वक विचार करें, तो दिवाभोजन के महत्त्व को पहचान लेवें।

किन्तु मनोज ने बीच ही में कुसुमकी बात काटते हुये कहा कि-'आजके युवक तो धर्म की बात सुनना ही पसंद नहीं करते- शास्त्रों को वह 'आउट डेट' कहकर के अनुपयोगी बता देते हैं।'

कुसुमने समाधानके स्वरमें कहा 'यह तो उनकी भूल है। शास्त्र अवश्य ही पुराने जमानेके रचे हुए हैं परन्तु उनमें सत्यका निरूपण

वैज्ञानिक आधार से किया गया है, इसलिए वह विकास के सभी मानवों के लिए समानरूप से उपयोगी है।'

'हो सकता है कि आपकी मान्यता ठीक हो, परन्तु आजका युग तो कहता है कि इस युगमें विज्ञान की महान उन्नति हुई है-विद्युत् प्रकाशमें सभी वस्तुयें स्पष्ट दिखती हैं-उसके आलोक में बैठकर भोजन करने में हानि हो क्या है ?'-मनोज ने शङ्का उपस्थित की।

कुसुम ने मुस्कराते हुये उत्तर दिया कि 'विज्ञान ने भले ही महान उन्नति की हो परन्तु वह प्रकृति के नियमों को नहीं बदल सकता-दिनके वातावरण की विशेषता को रातके वातावरण में नहीं ला सकता। रात तो रात ही रहेगी-और रातमें कीड़े मकोड़े और बहुतेरे पशुपक्षी निकलेंगे ही।'

'यह तो आपने ठीक कहा। विद्युतके प्रकाशमें तो और अधिक संख्यामें कीड़े मकोड़े आते और अपने प्राण गवाते हैं। विद्युतप्रकाश में रातको भोजन जहां पर भी बनाया जायगा वहां अधिक संख्या में कीड़ों पतंगों के आने की संभावना है।'-मनोज ने कहा।

'वस्तुस्थिति तो यही है।' कुसुमने बातको आगे बढ़ाया और बताया कि 'रातको हृदय व नाभिकमल संकुचित हो जाते हैं-इसलिए रात्रिभोजन स्वास्थ्य के अनुकूल नहीं पड़ता-शरीर को अप्राकृत रूपसे रातको भोजन करने के लिए बाध्य किया जाता है, जिससे स्वास्थ्य बिगड़ता है।'

'निस्संदेह यह अनुभव की बात है कि जो लोग रातके दस-ग्यारह बजे तक गरिष्ठ भोजन करते हैं उनको उसके हजम करने के लिए थोड़ा समय मिलता है और झटसे चारपाई की शरण लेकर भोगों में फंस जाते हैं जिसके कारण वे मंदाग्नि और फिर प्रमेह आदि भयंकर रोगों के शिकार होते हैं। उनके बीबी बच्चों का स्वास्थ्य भी ठीक नहीं रहता-डाक्टरों के बिलों के मारे उनकी नाकमें दम रहती है। मुझे तो स्वयं का अनुभव है, क्योंकि अब

दिवाभोजन का नियम लेने से बीमारियाँ अपने आप भाग गई हैं।'–मनोज ने कहा।

इसपर कुसुम बोली–'स्वास्थ्य के लिए दिवाभोजन परमावश्यक है-विशूचिका आदि संक्रामक रोग दिवाभोजियों के यहाँ घुस नहीं पाते। किन्तु आश्चर्य है कि सब कुछ देखते हुये भी लोग अपने को सुधारते नहीं हैं। कई लोगों को हमने देखा है कि वे पेट के रोगों से पीड़ित होते हुए भी कई बार रातके बारह बजे तक भोजन करते और झट वहीं सो जाते हैं। फिर सदा रोगके लिए भींकते रहते हैं। कदाचित् वे अपनी आदत सुधार लें, कम खायें और दिनमें खायें तो स्वस्थ रहें और पैसा भी बचे।'

'इसमें क्या शक है ?'–मनोज ने कहा–'किन्तु उनके गले यह सत्य उतरता नहीं।'

'इसका कारण विज्ञानके प्रति उनकी अंध श्रद्धा है।' कुसुमने स्थिति को स्पष्ट करते हुए आगे बताया कि 'ऐसे लोग विज्ञान के तथ्यों से भी ठीक जानकारी नहीं रखते वरन् विज्ञान भी दिवा-भोजन का समर्थन करता है।'

'अच्छा यह बात है तो बताइये ?'–मनोजने पूँछा। कुसुम ने तब उसे बताया कि 'विज्ञान ने सूर्यके प्रकाशको जीवन शक्ति प्रदायक तत्व सिरजन में मुख्य कारण माना है। सेव आदि फलों के छिलके का स्वस्थ और सुन्दर सूर्यका प्रकाश ही बनाता है। इसीलिए डाक्टर लोग छिलके सहित फलों को खाने की शिक्षा देते हैं। निस्संदेह सूर्यके उदय होते ही जीवन में नया ओज और नई स्फूर्ति आ जाती है-सब लोग अपने अपने कार्यों में लग जाते हैं। पशुपक्षी, कीड़े मकोड़े देखने को नहीं मिलते।'

'सूर्य प्रकाशकी महिमा अपार है।'–मनोज ने बातको सराहा, पर कुसुम कहता ही गया–'सूर्य प्रकाश की महिमा अपार तो है ही। उसमें नीलाकाश के रंगके सूक्ष्म कीटाणु स्वतः शमन हो जाते हैं, जिनका प्रसार रातको बढ़ता है और तेजसे तेज विद्युत्प्रकाश

में भी दिखते नहीं। उनके पतन से भोजन दूषित हो जाता है। सूर्य के प्रकाश में उनका दोष नहीं रहता।'

'इसका रहस्य क्या है?' मनोज ने पूछा।

'विज्ञान ने सूर्य के प्रकाश का रहस्य स्पष्ट कर दिया है।' कुसुमने बताया और कहा कि 'जब सूर्यप्रकाश की किरण किसी शीशा से गुजरती है तो उसमें सात रंग दिखाई पडते हैं जो वॉयलेट नीला, बैंजनी, हरा, पीला, नारंगी और लाल होते हैं यह रंग सूर्य प्रकाशके आन्तरिक अंश व रूप (Component parts) हैं। और स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद हैं। जीवन शक्ति प्रदायक प्राण-तत्वका वे सिरजन करते है। वैज्ञानिक बताते हैं कि इनके अति रिक्त सूर्यप्रकाशमें infra-red और ultra violet र गकी किरणें भी होती हैं। आल्ट्रावॉयलेट किरणों मे एक्स रे की तरह पुद्गलके भीतर तक घुसकर कीटाणुओं को नष्ट करने की शक्ति होती है। उनके कारण ही दिनमें कीटाणु प्रगट नहीं होते। आधुनिक विज्ञान वेत्ता ऐसी नकली किरणें बनाकर रोगादि के कीटाणुओं को नष्ट करने में समर्थ हुये हैं। यह किरणें रातमें नहीं मिलती। इसीकारण रातमें कीडे मकोडे आदि अधिक सख्या मे निकलते हैं। इसप्रकार विज्ञान से भी यह सिद्ध है कि दिवभोजन करना स्वास्थ्य वर्द्धक है और इसमें हिंसा भी कम है। इसके विपरीत रात्रिभोजन स्वास्थ्य का घातक है और उसमें हिंसा भी अधिक होती है। इसी लिए प्राचीन भारत मे और खासकर जनो में दिवाभोजन करने की ही परम्परा रही है।

'वैज्ञानिक भेद बताकर आपने मेरे विश्वास को दृढ कर दिया है। अब मैं कभी रात्रिभोजन नहीं करूंगा।'-मनोजने कहा।

'इस प्रतिज्ञाके द्वारा तुम अपनी आत्मा का ही कल्याण नहीं कर रहे हो, बल्कि समाजके लिए एक अनुकरणीय आदर्श उपस्थित कर रहे हो।'-कुसुमने कहा और फिर बताया कि 'जैन आचार्यों ने मनुष्य ही नहीं पशुओं तकको दिवाभोजी शाकाहारी बनाया था।'

'हाँ, सुना तो है कि शास्त्रों में पशुओं की ऐसी कथायें हैं, परन्तु वे व्रतकी महानता के लिए हो सकती हैं।'-मनोजने उदास होकर कहा।

'नहीं, यह बात नहीं है-वे तो सच्ची घटनायें हैं।'-कुसुमने जोरदार शब्दों में कहा और बताया कि व्रतोंके प्रभाव से शेर, सूअर हाथी नेवला, बंदर आदि महान ऐश्वर्यशाली मानव बने थे। जिन्होंने व्रतोंको पाला और दिवा भोजन किया तो तीर्थङ्कर महावीर हुआ। यह करनी का फल है। जैसा बोओ बोओगे वैसा फल मिलेगा। Law of Cause and Effect कार्यकारण सिद्धांत कार्य करता ही है।'

'किन्तु मानव मन निश्चिंत बन ऐसी कथाओं पर विश्वास नहीं करता।'-मनोजने फिर शङ्का उपस्थितकी, तो कुसुमने समाधान करते हुए कहा-'यह उनकी भूल है। पशुओं में भी बुद्धि और विवेक होता है। आज भी 'लिटिल टायक' नामक सिंहनी शाकाहारी देखी गई है। वह अमेरिका में अपनी मालकिन के साथ खुली घूमा करती और घोड़े बिल्ली आदि के साथ खेला करती थी। केनया (अफ्रीका) में भी एक ऐसी ही सिंहनी थी-उसके मालिकने उसे जंगलमें छोड़ दिया-फिर भी वह अहिंसक रही। और जब मन करती तब अपने बच्चेको लेकर अपने मालिक से मिल जाती। इसप्रकार के प्रत्यक्ष प्रमाणों के समक्ष पुराणग्रंथों की बातको अविश्वसनीय कैसे माना जा सकता है?'

हां भाई, इसप्रकार की साक्षी निस्संदेह उन कथाओं को तथ्यपूर्ण सिद्ध करती है। धन्य थे वे सिंह और बंदर जिन्होंने दिवाभोजन का नियम पाला और मरकर महान मानव बनने का सौभाग्य पाया।'-मनोजने व्रतका सराहते हुए कहा।

दोनों ही मित्र चुप थे किन्तु मनमें व्रत की महान शक्ति को पहचान रहे थे-दिवाभोजन की महिमा उनके हृदयों को प्रफुल्लित कर रही थी-इतनेमें मनोज को अपने मित्र की बात याद हो आई

उसने कुसुम से कहा-'भाई, एक बातका समाधान और करो। मेरा एक मित्र यह आक्षेप करता है कि जैनी अन्नाहार तो नही करते परन्तु रातको फलाहार करते और दूध पी लेते हैं-तो फिर अन्तर ही क्या रहा ?'

' कुसुमने मुस्करा कर उत्तर दिया-'यह तुमने अच्छा पूछ लिया। वास्तवमें जैनधर्म एक वैज्ञानिक धर्म है। तीर्थङ्कर भगवान सर्वज्ञ थे और मनावों की कमजोरियों को जानते थे। इसी कारण शक्तिके अनुसार क्रम क्रमसे व्रतों को धारण करने का विधान जैनधर्म मे किया गया है। एक साधरण गृहस्थ एकदम अन्न जल का त्याग नही कर सकता। धीरे धीरे अभ्यास करके ही वह पूर्ण त्यागी बन सकता है। है न यह बात सही ?'

' मनोज ने सिर हिलाकर कहा-'बिल्कुल सही व्यवहारिक है-Practical है।'

कुसुम मित्रके मुखसे यह सुनकर प्रसन्न हुआ और आगे बताने लगा कि चार प्रकार के आहार मे पहले अन्नाहार का त्याग करने से बडी भारी रोकथाम हो जाती है-रातको रसोई बनाने का कोई आरंभ नहीं किया जाता जिससे बहुत बडी हिंसा बच जाती है कदाचित् आवश्यकता होने पर केला आदि फल अथवा कुछ दूध मिठाई लेली तो उसमे अल्पारंभ होता है और व्रतकी भावना जगी रहती है, जो कल्याणकर है।'

'व्रत पालने की भावना जगी रहे, यह एक बडा लाभ है-इस का महत्व मैं अब समझा हू जब दिवाभोजन का नियम पालने लगा।'-मनोजने दृढता से कहा।

'कुसुम बोला 'विवेक भावके जगे रहने मे मानव हेय और उपादेय, श्रेय और अश्रेय को पहिचाने रहता है। ऐसे विवेकी को अपनी कमजोरी खटकती है और वह उसको दूर करने के प्रयासमें रहता है। धीरे २ चारित्रको निर्मल बनाते हुये जब वह रात्रिभोजन त्याग प्रतिमामें पहुँचता है तब पानी पीने तकका त्याग करदेता है।'

'यह तो बड़ा अच्छा क्रम है चारित्र विकास का! छोटा-सा नियम लेकर ही मानव चारित्रके मार्गमें आगे बढ़ सकता है। इस दिवाभोजन का पूर्णरूप में पालने के लिए पहला कदम रातमें अन्नाहार का त्याग करना ठीक ही है!'—मनोज ने समर्थन किया क्योंकि वह दिवाभोजन के लाभसे परिचित हो गया था।

'भइया, जैनाचार को कठिन और कठोर बतलाकर व्यर्थ ही लोगों को भयभीत कर दिया है।'—कुसुमने बातको आगे बढ़ाते हुए कहा और फिर बताया, 'सच तो यह है कि जैनधर्म के समान सरल और व्यवहारिक कोई धर्म नहीं। उसकी तो खुली घोषणा है कि धर्म पर भारी श्रद्धा रक्खो क्योंकि श्रद्धावान जीव ही अमर अमर पदको पाता है, किन्तु आचरण जितनी शक्ति हो उतना ही व्यवहार में लाओ।

जं सक्कइ तं कीरइ, जं च ण सक्कइ तच्च सद्दहणं।
सद्दह माणो जीवो पावइ अजरामरट्ठाणं।

कायर और आलसी मत बनो—प्रमाद न करो! रातमें कुछ भी न खाओ और न पीयो तो बड़ा ही अच्छा! ऐसी शक्ति न हो तो कुछ थोड़ा नियम लो; पर नियम तो लेना ही चाहिए।'

'निस्सदेह जैनधर्म महान व्यवहारिक धर्म है। यह ठीक कहता है कि जीवन रूपी कारको ठीकसे चलाने के लिए व्रत और नियम का ब्रेक जरूर लगाओ। ब्रेकके बिना जीवन संकट में पड़ सकता है।'—मनोज ने पुष्टि की।

कुसुम इस प्रकार मनोज की कायापलट हुई देखकर बड़ा ही प्रसन्न हुआ और उसने अपने को धन्य, माना। सच्चा मित्र वही है जो अपने साथी के हृदय को धर्मकी सुगन्धि से सुवासित कर दे। मनोज का हृदय भी मित्रके उपकार से दबा जा रहा था। दोनों ही मित्र प्रसन्न थे। दिवाभोजन की महत्ता को उन्होंने जाना और माना था। जो पाठक सुख और शांति चाहते हैं उनको चाहिये कि वह शक्तिको न छिपा कर व्रत और

ही भोजन करने का अभ्यास करें यह हमारी प्राचीन संस्कृति जीवित प्रतीक है।

निशि-भोजन

॥ दोहा ॥

निशा भोजन करिये नहीं, प्रगट दोष अविलोय।
परभव सब सुख संपजे, यह भव रोग न होय ॥

॥ छप्पय छन्द ॥

कीड़ी बुध बल हरे कंद गद करे कसारी ॥
मकड़ी कारण पाय कोढ उपजे दुख भारी ॥
जुआं जलोदर जने फांस गल विथा बढ़ावे।
बाल सये सुरभग पवन माखी उपजावे ॥
तालुये छिद्र बीछू भखत औ व्याधि बहु करहि थल।
यह प्रगट दोष निशअसनके पर भवदोष परोक्ष फल ॥

—कविवर स्व० भूधरदास

श्री अखिल विश्व जैन मिशन

अलीगंज (एटा) उ० प्र०



- विदेशों में एवं अपने देश में जैन दर्शन एवं अहिंसा संस्कृति का प्रचार।
- सम्पूर्ण विश्व के कोने कोने में शाखाओं की स्थापना एवं उनके द्वारा प्रचार कार्य।
- प्लेटफॉर्म प्रेस साहित्य प्रकाशन फिल्म व आकाशवाणी द्वारा संस्कृति एवं दर्शन का प्रसार एवं प्रचार।
- 'अहिंसा वाणी' एवं 'Voice of Ahimsa' मासिक पत्रिकाओं का प्रकाशन।
- अन्तर्राष्ट्रीय जैन विद्यापीठ के द्वारा जैन दर्शन एवं अहिंसा संस्कृति के विभिन्न अंगों पर शोधकार्यों के द्वारा ज्ञान प्रसार एवं निबन्ध व प्रबन्धों की परीक्षा का प्रारम्भ।
- अहिंसा सांस्कृतिक सम्मेलनों जैन साहित्य परिषदों एवं विद्वत गोष्ठियों का सफल आयोजन।
- अहिंसा रक्षा ग्रन्थालयों एवं वाचनालयों की स्थापना।
- विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में जैन साहित्य का समावेश।

श्री अखिल विश्व जैन मिशन

के सदस्य बनकर देश विदेश में

अहिंसा संस्कृति के प्रसारकार्य में

योग दीजिये व दिलाइये।

'मिशन' को आप निम्नप्रकार सहयोग दे सकते हैं –

- सदस्य बनकर
- 'अहिंसावाणी' तथा The 'Voice of Ahinsa' के ग्राहक बनकर
- धर्मोपदेश देकर व प्रतिज्ञा पत्र भराकर
- ट्रेक्ट प्रकाशित कराकर तथा
- सहायता देकर

सदस्यों को 'मिशन' द्वारा प्रकाशित ट्रेक्ट एवं 'अहिंसा वाणी' भेंट दिये जाते हैं। विशेष जानकारी के लिये निम्न पते पर पत्र व्यवहार करें।

श्री अखिल विश्व जैन मिशन
केन्द्र अलीगंज (एटा)
उ० प्र०

महावीर मुद्रणालय, अलीगंज

श्री तेरापंथ कुमार मंडल
के तत्व में ।

जैन दर्शन में तत्त्व-मीमांसा

—मुनि नथमल